ख़ाली बंदा

ख़ालिद फ़रहाद धारीवाल

ख़ाली बंदा

मुल्ला जी दीगर की नमाज़ पढ़ाकर हटे तो दो आदमी जोज़फ़ को लेकर हाज़िर हो गए। आम दिनों की बनिस्पत आज मस्जिद का अहाता लोगों से भरा हुआ था। जोज़फ़ को देखकर वहाँ मौजूद हरेक का चेहरा चमक उठा। लगता था, जोज़फ़ अभी

अभी नहाकर आया है क्योंकि उसके बालों में से पानी की बूँदें टपक रही थीं। वह बैठ गया तो मौलवी ने बात शुरू की।

"क्या तू वाकई इस्लाम कबूलना चाहता है?"

"हाँ।" जोज़फ़ ने पूरी दृढ़ता के साथ प्रश्न का उत्तर दिया।

"तूने अच्छी तरह सोच-विचार लिया है न?"

"तेरे इस जज़्बे के पीछे कोई वक्ती इच्छा तो नहीं?"

"कहीं तू किसी के ख़ौफ़ में आकर तो ऐसा नहीं कर रहा?"

"कोई लोभ-लालच तो तुझे प्रेरित नहीं कर रहा?"

मौलवी के हर सवाल का जवाब जोज़फ़ पूरी दृढ़ता के साथ देता तो वहाँ मौजूद लोगों के चेहरे तमतमा उठते।

"मज़हब बदलने के बाद तुझे मुश्किलें भी पेश आ सकती हैं, सह लेगा?"

"हाँ।"

"और तेरे बीवी-बच्चे?"

तकबीर के नारे ने मस्जिद में गूँज पैदा कर दी थी तब बीवी-बच्चों के बारे में पूछा। सवाल नारे की गूँज में अनसुना रह गया था। साथ ही उसकी बीवी बच्चों को संग लेकर अपने मायके गाँव गई हुई थी।

गाँव के एक तरफ ईसाइयों के थोड़े-से घर थे। ईसाइयों के इस मुहल्ले को 'ठठी' कहते थे और पूरी ठठी में एक जोज़फ़ ही काम का बंदा था। उसके साथ वालों को काम कम ही मिलता था। एक दिन कर लिया और चार दिन खाली निट्ठले, जोज़फ़ जवानी के समय से पिपली वालों का सेपी (बंटाईदार) चला आ रहा था और आज के समय में जब ज्यादातर खेती मशीनी हो गई है, फिर भी पिपली वालों ने उसको जवाब नहीं दिया था। दोनों पक्षों के मिलने-जुलने से जमींदार का काम-धंधा अच्छा चल रहा था। हर

छमाही के बाद जोज़फ़ को इस काम के बदले में साल भर के खाने लायक अनाज जुड़ जाता था और वह उसी में खुश था।

वह मेहनती बंदा था और धोले बालों की उम्र में भी जान मारकर काम करने का उद्यमी। उसकी घरवाली जेनी आप दमखम वाली बीवी थी। एक साथ दो दो बोहल (अनाज की ढेरी) लगाकर भी नहीं हाँफती थी। चार बच्चों के साथ उनका आँगन भरा लगता था। देर बाद मिली औलाद में सबसे बड़ा सीमोइल आठ साल का था। फिर साल साल के अंतर पर डेनिएल, जेम्स और पतरस थे।

देखने में कभी भी जोज़फ़ मजदूर नहीं लगता था। बल्कि कई बार फीके पिपली वाले की रिश्तेदारी से आए लोग, फीके के साथ खेतों में काम करते हुए जोज़फ़ को 'चौधरी क्या हाल है तेरा?' कहकर बुलाते थे। उनके लिए तो खेतों में काम कर रहा वह भी कोई जाट-जमींदार ही होता। पराये व्यक्ति को जोज़फ़ और फीके का अंतर तब पता चलता जब घर से रोटी लेकर आई फीके की घरवाली थोड़ा हटकर बैठे ज़ोजफ़ को सालन रोटी पर ही रखकर मेंढ़ पर पकड़ा देती और फीका लस्सी वाली बटलोई को मुँह लगाकर पीने के बाद बाकी बची हुई लस्सी को जोज़फ़ के हाथों की बनी ओक में उलटा देता।

कई बार ऐसे मौकों पर हास्यास्पद स्थिति में जोज़फ़ अपने बड़ों के हवाले से बताता कि "पीछे चौथी पीढ़ी में वे भी मुसलमान ही हैं। मेरे पड़दादे से कोई क़त्ल हो गया था और अंग्रेज राज में उसने फाँसी से बचने के लिए इस्लाम को त्यागकर ईसाई मज़हब धारण कर लिया था।" साफे के साथ लस्सी वाले हाथ पोंछते हुए जोज़फ़ बात आगे बढ़ाता, "वैसे तो वह फाँसी चढ़ने से बच गया, पर अपनी पुश्तैनी विरासत से हाथ धो बैठा और उसके भाइयों ने उसके मज़हब त्यागने का लाभ उठाते हुए उसको जायदाद में से बेदख़ल कर दिया था और तब से ही जमींदारों के कामगार लगे आ रहे हैं।" जोज़फ़ से कई बार सुनी इस बात को लोगों ने एक कथा-कहानी से ज्यादा कुछ नहीं समझा था।

मगर यह बात थी सच। ईसाई हुआ जोज़फ़ का पड़दादा सामाजिक तौर पर ईसाई कम्युनिटि में ऐसा फँसा था कि फिर वह उससे बाहर नहीं निकल सका था। और उसके मरने के बाद उसकी औलाद पक्की ईसाई हो चुकी थी जो पुश्त-दर-पुश्त गाँवों में

किसी न किसी तौर पर अपने पुश्तैनी पेशे के साथ जुड़ी आ रही थी जिसकी एक मिसाल जोज़फ़ भी था।

एकाएक इसी जोज़फ़ के मन में मुसलमान बनने की इच्छा उठ खड़ी हुई थी और अब वह मस्जिद में मौलवी के पास बैठा उसके सवालों के जवाब दे रहा था। "अच्छी तरह सोच ले, तू जिस मज़हब में आने वाला है, इसमें से फिर वापसी मुमकिन नहीं। कहीं कल को तेरे मन में आए...।"

वह पहले से ही यह सब सोच-विचारकर ही मस्जिद में आया होगा, पर फिर भी मौलवी ने अपनी ओर से जब अच्छी तरह ठोक-बजाकर जोज़फ़ से पूरी तरह पक्का करवा लिया तो उसको पश्चिम की ओर मुँह करके बिठा दिया। जोज़फ़ को यूँ बैठा देख मस्जिद में मौजूद लोग एकदम चुप हो गए। वे सारे अब सोच रहे थे कि किबला रुख बैठे जोज़फ़ की तारें कहीं दूर किसी पवित्र धरती के साथ जुड़ रही हैं। लोगों पर अजीब-सा असर हुआ था।

"पढ़ क़लमा!" मौलवी ने चुप तोड़ी।

"ला...इलाहा...इला...अल्लाह...।" वे धीरे धीरे एक एक लफ्ज़ पढ़ने लगे।

"ला...इलाहा...इला अल्लाह...।" जोज़फ़ भी उनके पीछे पीछे पढ़ रहा था।

'नारा तकबीर' क़लमा ख़त्म हुआ तो वहाँ मौजूद लोगों में से किसी एक ने ऊँची आवाज़ लगाई। 'अल्लाह हू अकबर' की गूँज में इस बार नई आवाज़ भी शामिल थी। जोज़फ़ की अपनी आवाज़।

"मुबारक।"

"मुबारक।"

लोग उसकी तरफ बढ़े, पर मौलवी ने उठ खड़े लोगों को हाथ के इशारे से बिठा दिया। क्योंकि अभी ईमान की सिफ्तें बाकी थीं। जोज़फ़ ने 'अमिंतो बिला' से लेकर 'तस्दीक

बिलकलब' तक मौलवी के पीछे पीछे पढ़ा और यह पढ़ने के बाद अब वह पूरा मुसलमान बन चुका था।

"मुबारक।"

"मुबारक।"

लोग जोज़फ़ को मुसलमान बनने की बधाई दे रहे थे। इसके बाद मौलवी ने थोड़ा वाअज़ किया जिसमें उन्होंने बताया कि जोज़फ़ अब उनका दीनी भाई बन चुका है और यह रिश्ता खून के रिश्ते से कहीं बढ़कर है। आखिर में उन्होंने तवारीख़ में से इस्लामी भाईचारे की कुछ मिसालें भी दीं।

वे लोग जिन्होंने एक उम्र जोज़फ़ को अपने करीब नहीं लगने दिया था, अब उसको गले लग लगकर मिल रहे थे। हर किसी में उसके लिए प्यार और अपनापन था। लोग उसको अपने साथ मिलकर खाने की दावत दे रहे थे। वही लोग जिन्होंने सदा उसको अपने खाने से एक फासले पर रखा था। जोज़फ़ के लिए यह सब कुछ नया था और हैरानी भरा था।

जोज़फ़ द्वारा अपना पिछला नाम अपने साथ जोड़े रखना ठीक नहीं था। इसलिए उसका नाम बदल देना ज़रूरी समझा गया। मस्जिद से बाहर निकला तो वह यूसुफ़ था। जोज़फ़ अंदर ही कहीं मस्जिद में तकबीर के नारों में दब गया था।

अब कई लाख पैगंबर उसके अपने थे और लाख से अधिक अपने नबी के अहसाब (हज़रत मुहम्मद के साथी) और अनेक वली भी उसके अपने थे। और दुनिया भर में इधर-उधर बिखरे लोग अब उसके अंग-संग थे। 'कैसे और क्यों?' इस बारे में अभी उसको कोई ज्यादा पता न था।

हज़रत अली अब अपने थे। अबू हनीफ़ा उसके इमाम थे।

और बग़दाद वाले पीर भी अब बेगाने नहीं रहे थे।

इसी तरह के अजीब अजीब अहसास उसके मन में पैदा होते रहते। चारों दिशाओं में उसकी साँझ हो गई थी। एक नया रिश्ता बन गया था। ऐसा सोचना उसको अच्छा लगता। उसको आनंद आता था, पर सोचते हुए सोच की सुई जब किसी 'क्यों या कैसे?' पर अटक जाती तो वह सोचना छोड़ देता।

मौलवी ने जोज़फ़ से कहा था कि अब वह एक अज़ीम इस्लामी विरसे का मालिक है। इस धरती का होने के बावजूद उसकी जड़ें एक पवित्र धरती में हैं। जोज़फ़ जब सोचता कि यहाँ की मिट्टी का पराई मिट्टी के साथ क्या रिश्ता हो सकता है? इसके मन की तारें दूर-दराज कैसे जुड़ सकती हैं? तो उसकी सोच की सुई इलाकां के फासले पर अटक जाती और वह सोचना छोड़ देता।

ऐसा सोचते हुए उसे अपने ईमान का रुख डोलता महसूस होता, जिसकी जड़ें अभी पाताल में नहीं गड़ी थीं।

लोगों का व्यवहार उसके लिए हैरानी भरा था। लोग उसको राह जाते को आवाज़ लगाकर पास बिठा लेते और अपने हुक्के की नड़ी उसकी ओर घुमाते हुए उसे हुक्का पेश कर देते। कई बंदे उसके हाथों उसका अपना हुक्का पकड़कर भी कश लगा लेते। यह सब कुछ इसलिए नया था और हैरानी भरा भी। यह सब कुछ पहले क्यों नहीं था? वह सोचता और कलमा पढ़ने के बावजूद इस व्यवहार की बुनियाद भूल जाता।

अपने और लोगों के बीच मिटते फासले को देखकर कई जगहों पर जोज़फ़ ने झिझक भी महसूस की थी।

'यह व्यवहार पहले क्यों नहीं था**?**' वह कम पढ़ा-लिखा बंदा सोचता।

'मेरा कुछ भी तो नहीं बदला।'

'ऊपर से तो कुछ भी दिखाई नहीं देता किसी का।'

'बंदा तो बस बंदा ही होता है।'

पर कुछ बंदे ईसाई होते हैं, कुछ हिंदू, मुसलमान, सिख और यहूदी। जोज़फ़ बंदे के इस बँटवारे को भूल जाता और लोगों के मिलने-बरतने और व्यवहार-बर्ताव की वजह जानने का यत्न करता। वह कहीं न कहीं सोच की सुई पर अटककर बैठ जाता।

और यदि कभी इस व्यवहार के पीछे छिपी खुदगरज़ी को वह जान जाता तो यह ज्ञान जोज़फ़ के लिए कितना दुखदायी होता।

ठठी से बाहर एक टोला जितना उसके करीब होता गया था, ठठी में दूसरा टोला उतना ही उससे दूर। ठठी वालों ने अपने लोगों पर जोज़फ़ से बोलने की रोक लगा दी थी। उसने उनका धर्म जो त्याग दिया था, इस वजह से लोगों को उस पर गुस्सा था। यहाँ लोग उससे नाराज़ थे। ठठी वालों का दूसरे मुसलमानों के साथ बोल-बुलारा तो था, पर जोज़फ़ के साथ बिल्कुल नहीं। और इन्हें खुद दूसरे मुसलमानों के साथ बोलता देखकर जोज़फ़ को इस दोगलेपन पर दुख होता।

जोज़फ़ अब कभी कभार ही ठठी में घुसता। ज्यादातर वह पिपली वालों की हवेली में ही पड़ा रहता। और फिर, कौन सा घरवाली यहाँ थी।

एक दिन उसकी घरवाली बच्चों को लेकर मायके से लौट आई।

मज़हब त्यागने की बात उसे वहीं मायके में पता चल गई थी। यह खबर सुनकर उसके भाई को बड़ा गुस्सा चढ़ा था।

एक बार तो वह चला भी था जोज़फ़ को सबक सिखाने, पर वह सूझवाला सयाना लड़का था। बड़ों ने समझा-बुझा लिया। बोले -

"तू पहला बंदा नहीं जिसे इस बात पर गुस्सा आया है। खुदाबंद यसू को सलीब देने वाले यहूदियों का आज नामोनिशान खत्म हो गया होता... तेरे से कहीं ज्यादा गुस्से वाले हो गुज़रे हैं... पर नहीं... बंदे मारने से कभी धर्म खत्म नहीं हुए।"

और यह आखिरी बात उसको छू गई। वह इतिहास से वाकिफ़ था और जानता था कि हिंद में से बुद्ध मत का नाम खत्म करने के यत्न ही जगत में इसका और ज्यादा प्रसार करने का कारण बने थे।

जेनी को चलते समय उसके माँ-बाप ने कहा था, "तू घरवाली है उसकी। जोज़फ़ को समझाना, शायद लौट आए। नहीं तो जोज़फ़ को लेकर जो फैसला वहाँ की चर्च करे, उस पर अमल करना होगा। ख़बरदार! जोज़फ़ की बातों में न आ जाना कहीं। वह तो बेगाना था, तू तो खून है हमारा। हम तेरे बदलने की आस नहीं कर सकते। जा बेटी, खुदाबंद तेरा निगहबान है।"

और जोज़फ़ को समझाने की कोशिश में उलटा वह उसको समझाने लग पड़ा था। "रब को किसी ने नहीं बाँटा। असल तो मनुष्यता है।" कभी कभी वह बहुत सयानी बातें कर जाता।

परंतु जेनी ने थक हारकर मिशनरी को जा कहा, "इस पर मेरी किसी बात का कोई असर नहीं होता।" आज मिशन के लोग उसके आँगन में आए बैठे थे। जेनी और चारों बच्चे भी मौजूद थे। यह चौपाल बैठी देखकर दो-चार मुसलमान जोज़फ़ के साथ भी आ मिले। मिशनरी ने साफ़ कह दिया था कि जेनी पर अब जोज़फ़ का कोई हक़ नहीं और आज से दोनों पक्की तरह अलग हैं।

जोज़फ़ की तरफ चले गए ज़रा सयाने सीमोइल और डेनिएल को मुसलमान मान लिया गया जब कि जेनी के पास बैठे रहे गए दो छोटे बच्चों को ईसाई मान लिया गया। अगर ठठी में जेम्स और पतरस को प्यार करने वाला एक से बढ़कर एक वहाँ मौजूद था तो ठठी से बाहर सीमोइल और डेनिएल के लिए भी मोह रखने वालों की कोई कमी नहीं थी। इन दोनों बच्चों को मौलवी शहर के किसी मदरसे में छोड़ आए थे जहाँ विश्वास है कि वे सीमोइल और डेनिएल, इस्माइल और दानियाल हो गए होंगे। ईसाई और मुसलमान बच्चों का यह बँटवारा और व्यवहार बच्चों की अक्ल से बाहर था।

बच्चों पर तो इसका बुरा असर पड़ना ही था, खुद जोज़फ़ पर भी इसका बुरा प्रभाव पड़ा। एक ही कोख से जनमे बच्चों का एक दूसरे के लिए ममनूअ (वर्जित) होना जोज़फ़ को बड़ा दुखता।

घर वाली जगह जोज़फ़ ने जेनी को दे दी थी, पर वह कुछ दिन अपनी बहन के घर रहकर बाद में अपने मायके लौट गई थी।

खुली आँखों के सामने बिखर गए परिवार को जोज़फ़ ने बाद में बंद आँखों से कई बार एकमेक करके देखा। सूरज की रोशनी में जुदा हुए एक घर के सदस्य सपने में दीये की लौ में इकट्ठा होते। ख्वाब में वह बच्चों को अक्सर आदम का किस्सा सुना रहा होता।

ज़ोजफ ने अब सोचना कुछ ज्यादा ही कर दिया। इसलिए उसकी सोच की सुई भी ज्यादा ही अटकने लगी।

पिपली वालों की हवेली में लेटा हुआ वह सोचता रहता और जब सुई अटक जाती तो वह सोचना छोड़ देता। वह फिर सोचता, सुई फिर अटक जाती और वह सोचना बंद कर देता। उसको कई बार नींद ही न आती। यदि कभी आँख लंग जाती तो उसको अजीब-से सपने आते।

एक रात उसने सपने में देखा कि जेनी रसोई में रोटियाँ पका रही है। बच्चे चूल्हे के इर्दगिर्द बैठे तवे पर से रोटी उतरने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। रोटी चंगेर में पड़ने से पहले ही बच्चों ने उसे लपक लिया और जिसके हाथ में जो बुरकी आई, उसे लेकर दौड़ पड़ा। तभी दानियाल ने पतरस को थप्पड़ दे मारा और चीखता हुआ बोला, "हाथ न लगा! मेरी रोटी भ्रष्ट कर दी पलीते!" जोज़फ़ की आँख खुल गई थी। वह 'हला लल्लुहीआ! हला लल्लुहीआ!!' कहता हड़बड़ाकर उठ बैठा था। बेसुधी में अपने पिछले खुदा का नाम जपते हुए को कुछ याद आया तो वह तुरंत सिर झटकता हुआ "ला होल" पढ़ने लग पड़ा था।

एक अन्य रात उसने सपने में अपने आप को कई घेरों में घिरा हुआ देखा था। वह ख्वाब में इन दुविधाओं में से बाहर निकाल का राह खोज रहा था। जब चल चलकर वह हाँफ गया तो फिर उसने इन घेरों को फाँदने का यत्न किया था। उसने छलाँग लगाई तो उसका हाथ मुंडेर पर जा पड़ा, पर तभी किसी ने उसकी टाँग को अपनी बाँहों में दबोच लिया था। तभी जोज़फ़ की नींद खुल गई थी। उसने देखा, उसकी साँस फूली हुई थी और उसकी एक टाँग चारपाई से नीचे लटक रही थी।

काफ़ी समय बाद किसी दिन-त्योहार पर गाँव आई जेनी का जोज़फ़ को पता लगा। उसने जेनी को किसी तरह लंबरदारां की हवेली के पिछवाड़े रात को शिरीष के पेड़ के नीचे मिलने की गुजारिश की।

तय किए समय से पहले ही वे शिरीष के पेड़ के नीचे आ बैठा और हवा में घुली शिरीष के पुष्पों की मीठी सुगंध साँसों के जरिये अंदर भरता रहा। लंबी प्रतीक्षा के बाद उसने अपनी ओर एक साया बढ़ता देखा तो वह उठकर खड़ा हो गया। वह जेनी ही थी जो अब उसके पास आ खड़ी हुई थी।

उनके बीच चुप का एक पहाड़ खड़ा था। हिमालय बराबर पहाड़ !

"जेनी !" चुप के पहाड़ पर से एक पत्थर लुढ़का।

"हाँ।" उसी पहाड़ के कुएँ में से आवाज़ आई।

"तू लौट क्यों नहीं आती?"

"तू भी पीछे लौट आ।"

एक बार फिर पसर गई चुप को जोज़फ़ की आवाज़ ने तोड़ा -

"जेनी!"

"हाँ।"

"याद है तुझे?"

"क्या?"

"जब फॉदर ने तेरी बाँह मेरे हाथ में पकड़ाते हुए कहा था कि जिस रिश्ते में तुम आज बंध गए हो, वह एक अटूट रिश्ता है। किसी एक के तोड़ने की कोशिश के बावजूद भी, और जीते जी अब तुम एक हो।"

"हाँ, याद है।"

"फिर आज वह रिश्ता क्या हुआ?"

"वो रिश्ता जोज़फ़ और जेनी के बीच था और अब तू यूसुफ़ है।"

"मेरा कुछ भी नहीं बदला। देख, मैं वही बंदा हूँ, जेनी मेरे दिल में आज भी तेरे लिए उतना ही मोह है जितना पहले था।"

जोज़फ़ ने आगे बढ़कर जेनी का हाथ पकड़ना चाहा जो उसने झटक दिया। जेनी दाएँ हाथ की उँगली से सीने पर सलीब बनाती हुई बोली -

"मैं जोज़फ़ को जानती हूँ, यूसुफ़ को नहीं।"

और फिर अँधेरे में गुम हो गई।

जोज़फ़ धरती में जैसे गड़ गया, कितनी ही देर अडोल खड़ा सोचता रहा। सोच की सुई जोज़फ़ और यूसुफ़ के बीच के फर्क़ पर आकर अटक गई, पर वह फिर भी सोचता रहा।

यूसुफ़ में गुम हुए जोज़फ़ को खोजता रहा। खोजता रहा। और फिर इसी खोज में खुद भी कहीं गुम हो गया।

सवेरे गाँव वालों ने देखा, वह पागल हो चुका था। अब वह न मुसलमान था, न ही ईसाई। ठठी में और ठठी के बाहर वह अब दोनों पक्षों के लोगों के लिए एक जैसा था क्योंकि पागल न ईसाई होता है, न ही मुसलमान। वह तो पागल ही होता है। बस, एक ख़ाली-ख़ाली सा बंदा !

https://www.hindiadda.com/khali-banda/